

ओ३म्

वेदादि विविध सत्यशास्त्रहरूको प्रमाण सहित—

सत्यार्थप्रकाश

(नेपाली)

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सम्पादक :

आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

विक्रमादित्य प्रतिष्ठान

स्मृति :

स्व० प० मेघराज शर्मा (विराटनगर)

स्व० श्री प्रह्लादराय अग्रवाल (रानी विराटनगर)

स्व० श्री नारायणमुनि वानप्रस्थी (जोगबनी, बिहार)

स्व० श्री पुण्यप्रसाद उप्रेती (भू०पू० आचार्या अध्यापक, विराटनगर जतुवा)

स्व० भू०पू० अञ्चलाधीश टेकबहादुर

रायमाझी (काठमाडौं)

- प्रकाशक : विक्रमादित्य प्रतिष्ठान
अध्यक्ष—डॉ० वीरदेव विष्ट (एम०ए०पीएच०डी०)
६४, हारमोनी ग्रोव रोड, लीलबर्न अटलाण्टा,
जी०ए०-३००४७ (यू०एस०ए०)
- संरक्षक : श्री सीताराम अग्रवाल (रानी विराटनगर)
श्री प० रतिराम शर्मा (सिलीगुड़ी)
श्री आचार्य पीताम्बर शर्मा (विराटनगर)
श्री माधवप्रसाद उपाध्याय (काठमाडौं)
- आवृत्ति : द्वितीय संस्करण
प्रति : पाँच हजार (५०००)
मूल्य : २००/-
- प्रकाशन तिथि : आर्यसमाज दिन, चैत्र शुक्ल २०६५
सृष्टिसम्बत्—१९६०८५३१०९
- शब्द संयोजक : भगवती लेजर प्रिंट्स
४६/५, कम्युनिटी सेंटर, ईस्ट ऑफ कैलाश,
नई दिल्ली-११००६५, दूरभाष: ०११-६६६०८९१६

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

१. नेपाल आर्यसमाज, आर्यनगर जतुवा-१८, विराटनगर (नेपाल)
२. गुरुकुल मा०वि० विराटनगर, आर्यनगर जतुवा-१८,
जिल्ला-मोरंग, अञ्चल-कोशी (नेपाल) फोन-०२१-५२७७९८
३. नेपाल आर्यसमाज, केन्द्रीय कार्यालय, पुरानो वानेश्वर (हाईट),
टंकप्रसाद मार्ग-१५/१६, काठमाडौं (नेपाल)
४. सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, रामलीला मैदान, नई दिल्ली-२

ओ३म्

आशीर्वचन

महर्षि दयानन्द सरस्वती की कालजयी कृति सत्यार्थप्रकाश का नेपाली भाषा में अनूदित यह संस्करण, नेपाली मूल के लिलबर्न (अटलाण्टा) संयुक्त राज्य अमेरिका निवासी बिष्ट परिवार के रु० ५,००,०००.०० (पाँच लाख रुपये मात्र) के पुण्यदान से प्रकाशित हुआ है।



दानशील बिष्ट परिवार महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त गुरुकुल महाविद्यालय झज्जर, रोहतक (हरियाणा) तथा गुरुकुल मंगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के यशस्वी स्नातक आचार्य डॉ० श्रीदेव बिष्ट ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी वेदानन्द वेदवागीश के प्रधान शिष्य हैं। पूर्वीय संस्कृति के प्राध्यापक डॉ० बिष्ट एवं उनकी धर्मपरायणा पुण्यशीला धर्मपत्नी मेनुका बिष्ट द्वारा उनके स्व० पुत्र विक्रमादित्य बिष्ट की पुण्य स्मृति में स्थापित, विक्रमादित्य प्रतिष्ठान, संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा प्रस्तुत यह सुमन उन दोनों की आयुष्मति पुत्रियों मदालसा तथा शैलजा की ओर से एक अनुपम भेंट है।

हम बिष्ट परिवार के उत्तरोत्तर उन्नति की हार्दिक मंगलकामना करते हैं।

सन् २००८

—आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

दो शब्द

महर्षि मनु, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र, योगेश्वर श्री कृष्णचन्द्र और महर्षि दयानन्द सरस्वती—संसार के इन चार महापुरुषों का सर्वोत्तम सामाजिक दृष्टि से सर्वोच्च स्थान रहा है। आप इनको युग नाम से पुकार सकते हैं। ये चारों महापुरुष युग क्रान्तिकारी, ईश्वरभक्त, वेदों की परम्परा के अनुयायी थे।

मानवों के आदिपुरुष महर्षि मनु ने कहा है—

वेदोऽखिलो धर्ममूलम् (२.६) अर्थात् सम्पूर्ण वेद धर्म के मूलस्रोत हैं। **प्रमाणं परमं श्रुतिः** (२.१३) अर्थात् धर्म निश्चय में सर्वोच्चतम प्रमाण वेद हैं। महर्षि मनु ने मनुस्मृति में वेदों का गुणगान किया है। वे शिक्षाविद् और कानूनविद् थे। स्वयं वेदों का अनुसरण किया व दूसरों को अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया। विश्व में जितने कानून-नियम चल रहे हैं, वह सब महर्षि मनु की ही देन है।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी ने भी महर्षि मनु द्वारा प्रतिपादित नियमों का अनुसरण करते हुए प्रजा का संरक्षण किया और वेदों के अनुसार जीवन को व्यतीत किया। इसलिये वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये।

महर्षि मनु और मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की भाँति योगेश्वर श्री कृष्णचन्द्रजी ने भी वेदों के अनुसार अपने जीवन को सार्थक किया। श्री कृष्ण ने गीता में कहा है—**वेदानां सामवेदोऽस्मि**, अर्थात् वेदों में मैं सामवेद हूँ। वे कर्मयोगी थे, अर्जुन को योगी और आर्य बनने की शिक्षा देते थे। इसलिये वे योगेश्वर कहलाये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों की ओर लौटो—ऐसा नारा दिया। वे अनेकानेक शास्त्रों के अध्ययन के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि “वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।” संसार में वैचारिक क्रान्ति लाने के लिये अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की रचना की। यह महर्षि दयानन्द जी की संसार को अनुपम देन है।

महाभारत युद्ध के पश्चात् वेद लुप्तप्राय हो गये थे। नास्तिकों की भरमार हो गई, अन्धानुकरण करनेवाले पाखण्डी इस देश में बढ़ गये, लोग ईश्वर, वेद, यज्ञ और सन्ध्या को भूल गये, वैदिक परम्परा छिन्न-भिन्न हो गई। उस विकट परिस्थिति में युगपुरुष वेदोद्धारक महर्षि

दयानन्द सरस्वती जी ने पुनः वैदिक परम्परा को स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश लिखकर जन-साधारण का ध्यान वेदों की ओर आकृष्ट किया। आज लाखों लोग सत्यार्थप्रकाश के सान्निध्य में अपने को कृत्यकृत्य कर रहे हैं।

आज हिमालय जैसे पर्वतीय क्षेत्र में आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के विचारों की अत्यन्त आवश्यकता है। इसी को ध्यान में रखकर नेपाली सत्यार्थप्रकाश मुद्रण की आवश्यकता जान पड़ी। सभी समस्याओं का समाधान सत्यार्थप्रकाश में है। सत्यार्थप्रकाश नेपाली में “विक्रम प्रतिष्ठान” अध्यक्ष डॉ० वीरदेव बिष्ट अमेरिका द्वारा प्रकाशित की जा रही है। विदित हो कि डॉ० साहब त्रिभुवन विश्वविद्यालय काठमाण्डो में प्रोफेसर व आचार्यपद को अलंकृत कर चुके हैं। काठमाण्डो से दक्षिण अफ्रिका के निमन्त्रण पर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु आहूत किये गये। वहाँ वैदिक धर्म का बहुत प्रचार किया। तत्पश्चात् अटलण्टा अमेरिका में विगत कई वर्षों से वैदिक धर्म के प्रचार में लगे हुए हैं। उन्होंने अमेरिका में रहते हुए विक्रमादित्य प्रतिष्ठान की ओर से आर्यसमाज के कई विद्वानों और समर्पित कर्मठ कार्यकर्ताओं को सम्मानित किया है। इस श्रेष्ठ कार्य में उनकी धर्मपत्नी मेनुका बिष्ट सपरिवार भरपूर सहयोग देती हैं। मैं विगत चार-पाँच वर्षों से नेपाली सत्यार्थप्रकाश के कम्प्यूटरीकरण में जुटा रहा। मेरे सामने प्रूफ शुद्धि-अशुद्धि की समस्या थी।

मैंने दो बार गुरुकुल विराटनगर नेपाली सत्यार्थप्रकाश पढ़ने के लिये भेजा, श्री कमल उप्रेती जी, पं० मेघप्रसाद दहोले और श्री आचार्य पीताम्बर शर्मा जी ने प्रूफ संशोधन किया। पुनः दूसरी बार भेजा, उन्होंने प्रूफ ठीक ढंग से नहीं देखा, तत्पश्चात् गुरुकुल विराटनगर के स्नातक ब्र० धनकुमार आचार्य ने दो-दो बार प्रूफ पढ़ा, अच्छा प्रयास किया है, एतदर्थ हार्दिक आशीर्वाद। प्रूफ पढ़ने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, विगत तीन मास से कठिनाइयों का काफी सामना करना पड़ा, श्री विजयकुमार झा, श्री ललित कुमार झा जी ने भगवती लेज़र प्रिंट्स के माध्यम से मुद्रण व्यवस्था शीघ्र करवाकर सहयोग किया। इन सभी महानुभावों का मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

आपका

आर्यसमाज का प्रहरी

आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

प्राक्कथन

सामाजिक वैचारिक क्रान्तिका उद्घोषक महर्षि दयानन्द सरस्वतीद्वारा रचित विभिन्न ग्रन्थहरूमा ‘सत्यार्थप्रकाश’ सर्वोत्कृष्ट र विशिष्ट महत्व को पूर्ण ग्रन्थ हो। यो ग्रन्थ लेख्नुको मुख्य उद्देश्य सत्य र तथ्य कुरा प्रकाश पार्नु हो भन्ने कुरा स्वयं महर्षिले आफ्नो भूमिकामा लेख्नुभएको छ। अविद्याकै कारण संसारमा विभिन्न मतमतान्तरहरू फैलिएका छन् र यिनका अनुयायीहरूले एक अर्काप्रति रिसराग द्वेष राख्ने र लड्ने-भिड्ने गरेको देखिन्छ। संसारमा सबैजना विद्वान् र गुणी भए सबैले सबैसँग प्रेमपूर्वक आचरण गरेर एक अर्काका विचारहरू सुने-सुनाएर एउटै सत्यमत सबैले मानेमा सबैको कल्याण बढ्दछ भन्ने यथार्थलाई उहाँले हृदयङ्गम गर्नुभयो। यसै यथार्थ अनुरूप उहाँले केनै नयाँ मत, पन्थ वा सम्प्रदाय बनाउने विचारको सट्टा वेदप्रतिपादित सत्य-सिद्धान्तलाई प्रस्तुत गरेर सत्य ग्रहण र असत्य त्याग गर्ने प्रेरणा दिनु नै उचित ठान्नुभयो। यसका लागि उहाँले यस ग्रन्थमा अज्ञानी, स्वार्थी, दुराग्रहीहरूद्वारा गरिएको वेदादि शास्त्रहरूका मिथ्या अर्थको खण्डन गरेर युक्ति र प्रमाणहरूद्वारा सत्य अर्थमाथि प्रकाश पार्नुको साथै मानवमात्रलाई वेदादिशास्त्रनुकूल असल कुरा ग्रहण गर्ने र खराब कुरा छोड्ने उपदेश गर्नुभएको छ। ऋषिले पक्षपातरहित भएर नम्रतापूर्वक सबै मतका सही कुराहरू ग्रहण र मिथ्या कुराहरू परित्याग गर्नु पर्ने आवश्यकता औँल्याउनु भएको छ र यस कुरामा स्वदेशी वा विदेशी बारे भेदभाव उहाँलाई स्वीकार्य छैन। यसै कारण ग्रन्थ आरम्भका एघार समुल्लासमा आफ्नो समाजमा रहेका असल-खराब कुराहरू विवेचन गरेर मात्र विदेशी सम्प्रदायहरूलाई समीक्षा गर्नु भएको छ। तर आफ्नो राष्ट्रियता जगेर्ना गर्नु र स्वदेशप्रेम भावना राख्नु प्रत्येक देशवासीको पुनीत कर्तव्य हो भन्ने पनि महर्षिको मनसाय देखिन्छ।

महर्षि दयानन्दले ईश्वर, धर्म, जाति, मत, पन्थ, छुवाछूत, अन्धविश्वास आदिका नाममा धर्मान्धहरूले अज्ञानीहरूलाई फसाउने र सामान्य जनताको विवेकलाई कुण्ठित पार्ने गरेका घटनाहरू देख्नु भएको थियो। ढोंग, पाखण्ड, चमत्कार, जादू-टोना आदि अनाचार

बढिरहेको र पूजा-पाठ योग-ध्यान, मुक्ति परमात्माको दर्शन आदिका नाममा ठगीको विकास भैरहेको देखेर यी सबै कुरीतिहरू प्रति जनचेतना जागाउन ऋषिले यस ग्रन्थ ईसाई, मुसलमान, जैन, बौद्ध, पौराणिक, शैव, शाक्त, वैष्णव आदि सबै मत-मतान्तरहरू प्रमाण सहित विवेचना गर्नुभएको छ। यस ग्रन्थमा उहाँले धर्म, ईश्वर, मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतकश्राद्ध, शिक्षापद्धति, वर्णाश्रमव्यवस्था, राजा-प्रजा र शासनपद्धति, जगत् उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय आदि सबै विषयमा तार्किक विश्लेषण गर्नु भएको छ। उहाँले सबै विषयमा पूर्वाग्रह रहित भएर ठीकलाई ठीक र बेठीकलाई बेठीक भन्नु वा मान्नुपर्दछ भन्ने कुरा विशेष आग्रह गर्नु भएको छ।

ठूला-ठूला विद्वान्हरूद्वारा गहन अध्ययन, अनुशीलन र अनुसन्धानका आधारमा धेरै विचारहरू विभिन्न भाषामा विभिन्न माध्यबाट प्रकाशित भई सकेका परिप्रेक्ष्यमा यस ग्रन्थवारे जति लेखे पनि थोरै हुन्छ, तापनि अत्यन्त संक्षेपमा भन्नुपर्दा—

“ईश्वरको स्वरूपलाई बुझ्न, अन्धविश्वास र पाखण्डको प्रतिकार गर्नु, सन्तानलाई सुशिक्षित पार्नु, गुण-कर्म-स्वाभाव अनुसार वर्णव्यवस्थालाई बुझ्न, आश्रम-व्यवस्थाको महत्त्व र गरिमालाई बुझ्न, राजनीतिका आवश्यक तत्वहरू बुझ्न, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना र उपासना गर्ने ठीक ठीक तरिका जान्न, ईश्वर, जीव र प्रकृतिका फरकलाई बुझ्न, संसारको उत्पत्ति, स्थिति र प्रलयवारे बुझ्न, बन्धन र मोक्षवारे बुझ्न, धर्मका सत्य स्वरूपलाई चिन्न, जताजतै देखापरेका मतमतान्तर वारे सत्य असत्य निर्णयका लागि, आफ्नो संस्कृतिलाई चिन्न, नवधुवकहरूका नैतिक चेतनाका लागि, धार्मिक, आर्थिक सामाजिक र राजनैतिक चेतनाका लागि तथा विश्वभरि मानव धर्मका स्थापनाका लागि सत्यर्थप्रकाश अध्ययन उपयुक्त र आवश्यक छ” भन्नु उचित हुनेछ।

२०४५ सालमा काठमाडौंमा नेपाल आर्य समाज केन्द्रिय कार्यालय संचालन भएदेखि नै यस महान् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश नेपाली भाषामा अनुवाद र प्रकाशन गर्ने प्रयास हुँदै आएको हो। यस केन्द्रिय कार्यालयका कर्णधार भू० पू० अञ्चलाधीश एवं श्री टेक बहादुर रायमाझीको प्रयास र आर्थिक सहयोगमा यस ग्रन्थको नेपाली भाषामा अनुवाद गराइएको र छपाउने प्रयास समेत भएको थियो। तर केही गैर—जिम्मेदार व्यक्तिका कारण ग्रन्थ छापिन सकेन र ग्रन्थ अनुवादको मूलप्रति पनि प्राप्त हुन सकेन। उपलब्ध प्रति नेपाली भाषा-साहित्यका प्रसिद्ध विद्वान् श्री

दैवज्ञ राज न्यौपानेलाई देखाउँदा उहाँले परिश्रमपूर्वक अवलोकन गरेर ‘धेरै ठाउँमा छुटेको, अनेक हिन्दी शब्दहरू अनुवाद नभएको र सर्वसाधारणले बुझ्न कठिन वाक्य गठन भएका कारण पुनः परिमार्जन आवश्यक छ’ भन्ने टिप्पणी गर्नुभएका कारण र सरसर्ती हेर्दा अनेक ठाउँमा अनुवाद ऋषि दयानन्दको मूलभावको विपरीत पनि देखिएकाले श्री रायमाझीज्यू र ने. आ. स. का वर्तमान केन्द्रिय अध्यक्ष श्री गोकुल प्र० पोखरेलज्यूको मनसाय अनुकूल सरस्वती ब. क्याम्पसमा नेपाली विभागका उपप्राध्यापक श्री कृष्ण प्रसाद पौडेलज्यूको सहयोग लिई उक्त अनुवाद परिमार्जन गर्ने नर्णय भयो। तर भाषा सच्याउने प्रयास गर्दा वाक्य झन् कृत्रिम हुने, भाषा प्रवाहपूर्ण बनाउन कठिन हुने र परिश्रम भने धेरै लाग्ने देखिएकोले त्यस अनुवादलाई पन्छाएर सम्पूर्ण ग्रन्थको छुट्टै पुनः अनुवाद गर्नु पर्ने अनुभव भयो। अतः श्री कृष्ण प्रसाद पौडेलज्यूको निर्देशनमा ग्रन्थ अनुवाद र छपाउने कार्य संगसँगै गरियो। पुफ हेर्ने र प्रेसकपी तयार पार्ने गरी दोहोरो कार्य, ग्रन्थकारका मूलभावमा फरक पर्ला भन्ने डर, ग्रन्थकारका हिन्दी वाक्यमा पनि कतै कतै जटिलता र यी सबै परिस्थितिका बीचमा अनुवादको जटिल स्थितिका कारण अझै पनि कतै कतै भाषा सरलता, सरसता वा प्रवाहमा व्यवधान देखिनु स्वाभाविकै हो। यद्यपि भावमा फरक नपर्ने गरी भाषालाई सकभर सजिलो बनाउने प्रयास भएकै छ।

ग्रन्थ अनुवाद सकभर प्रचलित नेपाली शब्दहरूकै प्रयोग गर्ने प्रयास गरिएको छ, तर पनि कतै कतै विदेशी भाषाका शब्दहरूलाई जस्ता त्यस्तै राख्नुपरेको छ। त्यस्ता पहिलो पटक आएका शब्दको अर्थ कोष्ठकमा वा=चिन्ह दिएर लेखेको छ भने त्यही शब्द दोहोरिएमा अर्थ लेख्ने पर्ने बाध्यताको उपेक्षा गरिएको छ। आफैलाई मूल शब्दको भाव छर्लङ्ग नभएको जस्तो लागेका ठाउँमा त्यस शब्द पछाडि कोष्ठकमा प्रश्न सूचक चिन्ह (?) राखिएको छ। यस्तो अवस्था खासगरी चौधौं समुल्लासमा आइपरेको छ। कुरान आदि त्यति अध्ययनका अभावा र अन्य सम्बन्धित विद्वान्हरूसँग सम्पर्क राख्ने समय नभएका अवस्थामा यसो हुनु स्वाभाविकै थियो। त्यस्तो कुनै ठाउँमा मूल भावमा फरक पर्न गएको देखिएमा विद्वान् पाठकहरूबाट आँल्याइने अपेक्षा छ। ते-हौं समुल्लासका सबै समीक्ष्यांशहरू नेपाल बायबल सोसायटीद्वारा सन् १९९२ मा प्रकाशित बायबल जस्ताको त्यस्तै राखिएको छ। सत्यार्थ

प्रकाशको हिन्दी र उक्त नेपालीको पाठमा केही फरक देखिएको भए तापनि मूलभावमा खास फरक परेको छैन।

सकभर शुद्ध र सरल रूपमा ग्रन्थकारको यथार्थ अभिप्राय बुझाउने प्रयास गरिएतापनि मानवीय स्वभावानुकूल वा अज्ञानतावश भूल वा कमी रहन गएको पाठकवर्गबाट अवश्य सूचित हुनेछ भन्ने विनम्र अनुरोध छ।

आर्थिक सहयोग गर्ने महानुभावहरूमा ने०आ०स०का० का संस्थापक श्री टेक बहादुर रायमाझी, उपाध्यक्ष श्री तिलक बहादुर कार्की, मनार्थ अध्यक्ष श्री उग्रसेन अग्रवाल, महासचिव श्री कालिका प्रसाद रिमाल, उद्योगपति श्री गोपाल राय संघई, श्री कल्याण के०सी० सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नयाँ दिल्ली र ब्रह्मचारी नन्दकिशोरजी द्वारा प्रेरित विभिन्न भारतीय महानुभावहरू पनि हुनुहुन्छ। नेपाल आर्य समाज उक्त माहानुभाव प्रति आदरभाव र आभार व्यक्त गर्नुको साथै उहाँहरूको यश, सुस्वास्थ्य, दीर्घायु, धनधान्यको वृद्धि र समाज सेवा कार्यमा निरन्तर संलग्नताको हार्दिक कामना गर्दछ। दाताहरूको फोटोसहित संक्षिप्त परिचय (उपलब्ध भएसम्म) यस ग्रन्थका अन्तमा दिइएको छ।

नेपाल आर्य समाजका केन्द्रिय अध्यक्ष श्री गोकुल प्रसाद पोखरेलज्यूबाट ग्रन्थ प्रकाशन कार्यमा समय समय दिशा नर्देशनद्वारा महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त भएको छ। मेरा घनिष्ठ मित्र श्री चारानाथ मैनाली र श्री के०एल० श्रेष्ठको सहयोग पनि अविस्मरणीय छ। प्रेमसँग सम्पर्क र दौडधूपका कार्यमा आर्य समाजका सेवक तेज प्रसाद वाग्ले ले गरेको परिश्रम सराहनीय छ। ग्रन्थ छपाइमा आर्य छापाखाना प्रा० लि० का श्री केशव लाल श्रेष्ठ र कर्मचारीवर्गको सहयोग र मिठो व्यवहारका लागि आर्य छापाखाना प्रा० लि० परिवार धन्यवादको पात्र छ।

माधव प्रसाद उपाध्याय

सदस्य—सचिव

नववर्ष, २०५१।१।१
अप्रैल १४, १९९४ ई०

नेपाल आर्य समाज, केन्द्रिय कार्यालय
बत्तिसपुतली, काठमाडौं

सत्यार्थप्रकाशको विषयसूची

विषय	पृष्ठ
भूमिका	१३-२०
पहिलो समुल्लास	२१-४१
ईश्वरनामव्याख्या; मंगलाचरण समीक्षा ॥	
दोस्रो समुल्लास	४२-५०
बालशिक्षाविषय; भूतप्रेतादि निषेध; जन्मपत्र-सूर्यादिग्रह समीक्षा ॥	
तेस्रो समुल्लास	५१-८९
अध्ययन-अध्यापन विषय; गुरुमन्त्रव्याख्या, प्राणायाम शिक्षा; सूर्या र अग्निहोत्रको उपदेश; यज्ञपात्रहरूको आकृति; उपनयन समीक्षा; ब्रह्मचर्यको उपदेश; ब्रह्मचर्य कृत्य; अध्ययन-अध्यापकामा पाँच किसिमन परीक्षा; पठन-पाठनको विशेष विधि; ग्रन्थहरूका प्रामाणिकता र अप्रामाणिकता; स्त्री र शूद्रका अध्ययन विधि ॥	
चौथो समुल्लास	९०-१३७
समावर्तन; विवाह टाढा ठाउँमा हुनुपर्ने; विवाहका लागि स्त्री पुरुषको परीक्षा; कम उमेरमा विवाह गर्न नहुने; गुण कर्म अनुसार वर्ग व्यवस्था; विवाहका लक्षण; स्त्री-पुरुषका व्यवहार; पञ्चमहायज्ञ; पाखण्डीको लक्षण; गृहस्थ धर्म; पण्डितको लक्षण; मूर्खको लक्षण; विद्यार्थीहरूका लक्षण; पुनर्विवाहवारे विचार; नियोग विषय; गृहस्थाश्रमको श्रेष्ठता ॥	
पाँचौं समुल्लास	१३८-१५१
वानप्रस्थाश्रमको विधि; संन्यासश्रम विधि ॥	
छैठौं समुल्लास	१५२-१९०
राजधर्म विषय; तीन प्रकारका सभा; राजाको लक्षण; दण्डव्याख्या; राजाका कर्तव्य; अठार व्यसन निषेध; मन्त्री दूत आदि राजपुरुषका लक्षण; मन्त्री आदिलाई कार्य सुम्पने; दुर्ग निर्माण; युद्ध गर्ने	

प्रकार; राज्य रक्षाको विधि; ग्रामाधिपति आदिको वर्णन; कर लिने प्रकार; मन्त्रणा गर्ने प्रकार; आसन आदि छः गुणका व्याख्या; राजाले मित्र उदासीन र शत्रुसँग गर्नुपर्ने व्यवहार र शत्रुसँग युद्ध गर्ने प्रकार; व्यापार राजभाग वर्णन; अठार विवादमार्गमा धर्मपूर्वक न्याय गर्नुपर्ने; साक्षीका कर्तव्यहरूको उपदेश; झूठो साक्षी दिनेलाई दण्ड; चोरी आदिमा दण्ड आदिको व्याख्या ॥

सातौं समुल्लास १११-२२२

ईश्वरविषय; ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना; ईश्वरलाई जान्ने प्रकार; ईश्वरको अस्तित्व; ईश्वरको अवतार निषेध; जीवको स्वतन्त्रता; जीव र ईश्वरको भिन्नता; ईश्वरको सगुण-निर्गुण स्वरूप कथन; वेदविषय विचार ॥

आठौं समुल्लास २२३-२४९

सृष्टि उत्पत्ति आदि विषय; ईश्वर भिन्न प्रकृति उपादान कारण; सृष्टिवारे नास्तिकमतको निराकारण; मानिसको आदि सृष्टिको स्थानादिनिर्णय; आर्य, म्लेच्छ आदि व्याख्या; ईश्वर जगत्का आधार ॥

नवौं समुल्लास २५०-२७५

विद्या, अविद्या विषय; बन्धमोक्षविषय ॥

दशौं समुल्लास २७६-२९१

आचार अनाचारविषय; भक्ष्य, अभक्ष्य विषय ॥

इति पूर्वाब्धः ॥

अनुभूमिका (१) २९२-२९३

एघारौं समुल्लास २९४-४३४

आर्यावर्त देशीयमतखण्डनमण्डन विषय; मन्त्रादिसिद्धिको निराकरण; वाममार्गको निरूपण; अद्वैतवाद समीक्षा; भस्म-रुद्राक्ष-तिलक आदि समीक्षा; वैष्णवमतसमीक्षा; मूर्तिपूजासमीक्षा; पञ्चायतनपूजा समीक्षा; गयाश्राद्ध समीक्षा; जगन्नाथतीर्थ समीक्षा; रामेश्वरसमीक्षा; कालियाकान्तसोमनाथ आदि समीक्षा; द्वारिका ज्वालामुखी समीक्षा; हरद्वार-बदरीनारायण आदि समीक्षा; गङ्गास्नान समीक्षा; 'तीर्थ' शब्दको अर्थ; गुरुमाहात्मा समीक्षा; अठार पुराण समीक्षा; शिव पुराण समीक्षा; भागवत समीक्षा;

भूमिका ११

सूर्य आदि ग्रह-पूजा समीक्षा; मरेकाहरूका लागि गरि दिने दान आदिको समीक्षा; एकादशी आदि व्रत समीक्षा; मारण-मोहण-उच्चाटन वाममार्ग समीक्षा; शैवमत समीक्षा; शाक्त र वैष्णवमत समीक्षा; कबीरपन्थ समीक्षा; नानकपन्थ समीक्षा; दादूपन्थ समीक्षा; गोकुलिया गोसाईमत समीक्षा; स्वामिनारायणमत समीक्षा; माध्व-लिङ्गाङ्कित-ब्राह्म प्रार्थनासमाज आदिको समीक्षा; प्रश्न-उत्तर; ब्रह्मचारी, संन्यासीको समीक्षा; आर्यावर्तीयराजवंशावली ॥

अनुभूमिका (२) ४३५-४३६

बाह्रौं समुल्लास ४३७-५०७

नास्तिकमत समीक्षा; चारवाकमत समीक्षा; चारवाक आदि नास्तिकहरूको भेद; बौद्ध-सौगातमत समीक्षा; जैन र बौद्धहरूको एकता; अनास्तिक-नास्तिक संवाद; जगत् अनादि छ भन्ने कुराको समीक्षा; जैनमतमा भूमिको परिमाण; जीव बाहेक अरूको जडत्व पापमा पुद्गलहरूको प्रयोजकत्व; जैनधर्म प्रशंसा आदिको समीक्षा; जैनमत मुक्तिको समीक्षा; जैनमतका साधुहरूको लक्षण समीक्षा; जैनमतका चौबीस तीर्थङ्करहरूको व्याख्या; जैनमतमा जम्बूद्वीप आदिको विस्तार ॥

अनुभूमिका (३) ५०८-५०९

तेह्रौं समुल्लास ५१०-५७३

क्रिश्चियनमतको समीक्षा; (तौरैत उत्पत्तिको पुस्तक); तौरैत प्रस्थानको पुस्तक; तौरैत-लेवीव्यवस्थाको पुस्तक; गन्तीको पुस्तक; शमूएलको दोस्रो पुस्तक; राजाहरूको दोस्रो पुस्तक; इतिहासको पहिलो पुस्तक (जवूरको दोस्रो भाग, कालको समाचारको पहिलो पुस्तक); अय्युबको पुस्तक; उपदेशको पुस्तक; मत्तीको सुसमाचार (इज्जील); मर्कूसको सुसमाचार (मार्करचित इज्जलील); लुकाको सुसमाचार (लूकरचित इज्जील); यूहन्नाको सुसमाचार; यूहन्नालाई भएको प्रकाश ॥

अनुभूमिका (४) ५७४-५७५

चौधौं समुल्लास ५७६-६४८

स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश ६४९-६५६

इति

१२ सत्यार्थप्रकाश

ओ३म् सच्चिदानन्देश्वराय नमो नमः

भूमिका

मैले यो 'सत्यार्थप्रकाश' ग्रन्थ लेख्दा र त्यस अधि पठन पाठन र बोल्ने भाषा संस्कृत नै हुँदा र जन्मभूमिको भाषा गुजराती हुनाले मलाई हिन्दी भाषाको विशेष ज्ञान थिएन, त्यसैले भाषामा अशुद्धि हुन गएको थियो। अब भाषा बोल्ने र लेख्ने अभ्यास भई सकेकोले यस ग्रन्थलाई भाषा व्याकरण अनुसार सच्याएर दोस्रो पटक छपाइएको छ। त्यसैले कतै कतै शब्द वाक्य रचानामा फरक पर्नु स्वाभाविकै हो। किनभने यस्तो फरक नगरी भाषा शैली ठीक हुन कठिन थियो। तर अर्थको भेद गरिएको छैन, बरू बढी लेखिएको छ। पहिलो छपाईमा रहन गएका त्रुटिहरूलाई सच्चाई शुद्ध पारिएको छ।

यो ग्रन्थ चौध समुल्लास अर्थात् १४ विभागमा रचिएको छ। यसमा १० समुल्लास पूर्वाद्ध र ४ उत्तराद्धमा रहेका छन्। अन्तका दूई समुल्लास र त्यसपछि स्वसिद्धान्त कुनै कारणले पहिले छापिएका थिएनन् अब ती पनि छपाइएका छन्।

१. प्रथम समुल्लासमा ईश्वरका ओङ्कार आदि नामहरूको व्याख्या।
२. दोस्रो समुल्लासमा सन्तानहरूको शिक्षा।
३. तेस्रो समुल्लासमा ब्रह्मचर्य, पठन पाठन व्यवस्था, सत्य असत्य ग्रन्थहरूका नाम र पढने पढाउने पढाउने रीति।
४. चौथो समुल्लासमा विवाह र गृहस्थ आश्रमको व्यवहार।
५. पाँचौ समुल्लासमा वानप्रस्थ र संन्यास आश्रमको विधि।
६. छैठौं समुल्लासमा राजधर्म।
७. सातौं समुल्लासमा वेद र ईश्वरका विषय।
८. आठौं समुल्लासमा जगत् उत्पत्ति, स्थिति र प्रलय।
९. नवौं समुल्लासमा विद्या, अविद्या, बन्ध र मोक्षको व्याख्या।
१०. दशौं समुल्लासमा आचार, अनाचार र भक्ष्य—अभ्यक्ष विषय।
११. एघारौं समुल्लासमा आर्यावर्तीय मतमतान्तरको खण्डन मण्डन विषय।
१२. बाह्रौं समुल्लासमा चारवाक, बौद्ध र जैनमतको विषय।
१३. तेह्रौं समुल्लासमा ईसाई मत विषय।
१४. चौधौं समुल्लासमा मुसलमानहरूका मतको विषय।

र चौध समुल्लासको अन्तमा आर्यहरूका सनातन वेदोक्त मत व्याख्या लेखिएको छ जसलाई म पनि यथावत् मान्दछु।

मेरो यो ग्रन्थ लेख्नुको मुख्य उद्देश्य सत्य र तथ्य कुरामा प्रकाश पार्नु हो, अर्थात् सत्यलाई सत्य र मिथ्यालाई मिथ्या नै प्रतिपादन गर्नु सत्य अर्थको प्रकाश सम्झेको छु। त्यो सत्य भनिदैन जो सत्यको ठाउँमा असत्य र असत्यको ठाउँमा सत्यको प्रकाश गरीयोस्। तर जुन पदार्थ जस्तो छ, त्यसलाई त्यस्तै भन्नु, लेख्नु र मात्र सत्य भनिन्छ। पक्षपाती व्यक्ति आफ्नो असत्यलाई पनि सत्य र अरू विरोधीमतवालाका सत्यलाई पनि असत्य सिद्ध गर्न तर्फ लाग्दछन। त्यसैले त्यस्ता व्यक्ति सत्यमतलाई प्राप्त गर्न सक्तैन। त्यसकारण विद्वान् आप्त पुरुषहरूले उपदेश वा लेखद्वारा सबै मानिसका अगाडि सत्य र असत्य यथार्थ स्वरूप प्रष्ट्याई दिनु नै उनीहरूको मुख्य काम हो। जसबाट मानिसहरू आफ्नो हित वा अहित आफैं बुझेर सत्य अर्थ ग्रहण र मिथ्या अर्थ परित्याग गरी सदा आनन्दमा रहन सकून्।

मनुष्यको आत्मा सत्य र असत्यलाई जान्ने भए तापनि आफ्नो प्रयोजन सिद्धि, हठ, दुराग्रह र अविद्या आदि दोषहरूका कारण सत्यलाई छोडी असत्यतर्फ लुक्छ। तर यस ग्रन्थमा यस्तो कुरा राखिएको छैन। कसैको मन दुखाउने अथवा कसैको हानिगर्ने तात्पर्य पनि छैन। मनुष्य जातिको उन्नति र उपकार होस् मानिसहरू सत्य र असत्यलाई बुझेर सत्यको ग्रहण र असत्य त्याग गरून् भन्नु नै यस ग्रन्थको तात्पर्य हो। किन भने सत्य उपदेश विना मनुष्य जातिको उन्नतिहुने अरू कुनै उपाय छैन।

यस ग्रन्थमा विभन्न कारणले रहन गएका त्रुटिहरूलाई कसैले औँल्याई दिएमा अवश्य नै सच्याइने छ, तर विरोधका नियतले गरिएको पक्षपात, अन्याय शङ्का या खण्डन-मण्डन तर्फ ध्यान दिइने छैन। मनुष्य मात्रको भलाईका लागि प्राप्त उचित सुझाव भने अवश्य स्वीकार गरिने छ।

यद्यपि हिजोआज प्रत्येक मतमा धेरै विद्वानहरू लागेका छन्। उनीहरूले निष्पक्ष भएर सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जुन कुरा सबैको अनुकूल सबैमा सत्य छन् तिनलाई ग्रहण र जुन कुरा एक अर्का विरुद्ध छन् तिनलाई त्यागेर परस्पर प्रेम पूर्वक व्यवहार गर्ने गराउने गरेमा जगत्को पूर्ण कल्याण हुनेछ। किनकि विद्वानहरूका विरोधले अविद्वानहरूमा विरोध बढ्दै गई अनेकौं दुःखहरू वृद्धि र सुख हानि

हुन्छ। स्वार्थीहरूलाई प्रिय हुने यसै हानिले सबै मानिसहरूलाई दुःख सागरमा डुबाएको छ।

यी मध्ये जो कोही सार्वजनिक हितलाई लक्ष्य बनाई लागेका हुन्छन्, स्वार्थीहरू त्यसका विरोधमा अनेक विध्वन बाधा उत्पन्न गर्दछन्। तर 'सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः' मुण्डकोपनिषद ३।१।६ अर्थात् सदा सत्यको जीत र असत्यको हार हुन्छ साथै सत्यद्वारा नै विद्वान्हरूको मार्ग विस्तृत हुन्छ। यसै दृढ निश्चय अवलम्बन गरेर आप्त पुरुष कहिल्यै परोपकार देखि उदसीन भई सत्य अर्थ प्रकाश गर्न पछि हट्दैनन्।

यो सत्य हो कि 'यदत्तग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्' गीता १८।३७ यो गीताको वचन हो। यसको अभीप्राय हो विद्या र धर्मप्राप्तिका कार्य आरम्भमा विष तुल्य र पछि अमृत समान हुन्छन्। यस्ता कुराहरू मनमा राखेर मैले यो ग्रन्थ रचेको छु। श्रोता वा पाठकगण पनि पहिले प्रेमपूर्वक हेरेर यस ग्रन्थको सत्य सत्य तात्पर्य बुझेर उचित व्यावहार गर्नु।

यस ग्रन्थमा सबै मतका सही कुरा विरोध रहित हुनाले स्वीकर र मतमतान्तरका मिथ्या कुराहरू खण्डन गरिने र सबै मतमतान्तरहरूका गुप्त वा प्रकट गलत कुराहरूलाई प्रकाशित गरेर विद्वान् अविद्वान् सबै साधारण मानिसहरू सामु राख्ने उद्देश्य रहेको छ, जसबाट सबै जना सबैसँग विचार विर्मश गरी परस्पर प्रेम पूर्वक सत्य मतमा लाग्नु।

यद्यपि म आर्यावर्त देशमा जन्मेकोर बसेको छु तापनि जसरी यस देशका मतमतान्तरहरूका झुठा कुराहरू पक्षपात नगरी जसरी तस्तै प्रकाश गर्दछु, त्यसै गरी अरू देश वा मतावलम्बीहरूसँग पनि व्यवहार गर्दछु, जस्तो स्वदेशीहरूसँग मनुष्योन्नतिका विषय मा व्यवहार गर्छु त्यस्तै विदेशीहरूसँग पनि गर्दछु। तथा त्यस्तै सबै सज्जनहरूले पनि व्यावहार गर्नु उचित हुन्छ। किनकि म पनि कुनै एकको पक्षपाती भएको भए जसरी आजभोली आफ्नो मतको प्रशंसा र समर्थन तथा अरूका मतको निन्दा, हानि र प्रतिबन्ध गर्न तत्पर हुन्छन् त्यसै गरी म पनि हुने थिएँ। तर यस्ता कुरा मानवता बाहिरका हुन्। जसरी पशु बलवान भएर निर्बललाई दुःख दिने र मार्ने पनि गर्छन् कुनैले मनुष्य शरीर पाएर त्यस्तै कर्म गर्छन् भने ती मनुष्य स्वभावयुक्त न भई पशुतुल्यै हुन्। जो बलवान् भएर निर्बलहरूलाई रक्षा गर्दछ उही मनुष्य भनिन्छ अनि जो स्वार्थी भई अरूलाई हानि मात्र गरिरहन्छ त्यो त पशुहरूको

पनि दाजु हो।

आर्यावर्तमा बस्नेहरूका बारेमा खासगरी एघारौँ समुल्लास सम्म लेखिएको छ। यी समुल्लासहरूमा जो सत्यमत प्रकाशित गरिएको छ त्यो वेदोक्त हुनाले मलाई सर्वथा मान्य छ अनि जो नयाँ पुराण, तन्त्र आदि ग्रन्थमा भनिएका कुराहरू खण्डन गरिएको छ ती सबै त्याग्नै पर्ने छन्।

बाह्रौँ समुल्लासमा लेखिएको चारवाक मत यद्यपि अहिले अस्ताएको सरह छ र यो चारवाक अनीश्वरवाद आदिमा बौद्ध र जैनसँग निकै सम्बन्ध राख्दछ। यो चारवाक सबैभन्दा ठूलो नास्तिक हो। यसको चेष्टालाई रोक्नु आवश्यक छ, किनभने मिथ्या कुराहरूलाई न रोकिएमा संसारमा धेरै अनर्थहरू बढ्दछन्। चारवाक मत र बौद्ध तथा जैनको मत पनि बाह्रौँ समुल्लासमा संक्षेपमा लेखिएको छ। बौद्ध तथा जैनीहरूको पनि चारवाकको मतसँग मेल छ र केही मतभिन्नता पनि छ, यसैले जैनीहरूको भिन्नै शाखा मानिन्छ। त्यो भेद बाह्रौँ समुल्लासमा देखाइएको छ। बौद्ध र जैनमत विषय पनि लेखिएको छ।

यिनमा बौद्धहरूका दीपवंश आदि प्राचीन ग्रन्थहरूमा बौद्धमत संग्रह, सर्वदर्शनसंग्रहमा देखाइएको छ, त्यहीबाट यहाँ लेखिएको हो। अनि जैनीहरूका निम्नलिखित सिद्धान्त सम्बन्धी पुस्तक छन्। उनमा—

चार मूलसूत्र, जस्तै—१. आवश्यकसूत्र, २. विशेष आवश्यकसूत्र, ३. दशवैकालिकसूत्र, र ४. पाक्षिकसूत्र।

एघार अंग, जस्तै—१. आचारांगसूत्र, २. सुगडांगसूत्र, ३. थाणांगसूत्र, ४. समवायांगसूत्र, ५. भगवतीसूत्र, ६. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, ७. उपासकदशासूत्र, ८. अन्तगडदशासूत्र, ९. अनुत्तरोववाइसूत्र, १०. विपाकसूत्र, र ११. प्रश्नव्याकरणसूत्र।

बाह्र उपांग, जस्तै—१. उपवाइसूत्र, २. रावप्सेनीसूत्र, ३. जीवाभिगमसूत्र, ४. पन्नगणासूत्र, ५. जम्बुद्धीपपन्नतीसूत्र, ६. चन्दापन्नतीसूत्र, ७. सूरपन्नतीसूत्र, ८. निरियावलीसूत्र, ९. कप्पियासूत्र, १०. कपवडीसयासूत्र, ११. पूप्पियासूत्र, र १२. पुप्पचूलियासूत्र।

पाँच कल्पसूत्र, जस्तै—१. उत्तराध्ययनसूत्र, २. महानिशीथलघु-वाचनासूत्र, ३. मध्यमवाचनासूत्र, ४. पिंडिनिरुक्तिसूत्र, र ६. पर्युषणा-सूत्र।

दश पयत्रासूत्र, जस्तै—१. चतुस्सरणसूत्र, २. पञ्चखाणसूत्र, ३.

तदुलवैयालिकसूत्र, ४. भक्तिपरिज्ञानसूत्र, ५. महाप्रत्याख्यानसूत्र, ६. चन्दानिजयसूत्र, ७. गणीविजयसूत्र, ८. मरणसमाधिसूत्र, ९. देवेन्द्रस्त-वनसूत्र, र १०. संसारसूत्र तथा नन्दीसूत्र, योगोद्धारसूत्र पनि प्रामाणिक मानिन्छन् ।

पाँच पञ्चाङ्ग, जस्तै—१. पहिला सबै ग्रन्थहरूको टीका, २. निरुक्ति, ३. चरणी, ४. भाष्य, यी चार अवयव र सबै मूल मिलेर पञ्चाङ्ग भनिन्छ ।

यिनमा ढूँढियाहरू अवयवलाई मान्दैनन् र यी बाहेक अरू पनि अनेक ग्रन्थलाई जैनीहरू मान्दछन् । यिनीहरूको मतको विशेष विचार बाह्रौं समुल्लासमा हेर्नु होला ।

जैनीहरूका ग्रन्थहरूमा लाखौं पुनरुक्त दोष छन् र आफ्नो ग्रन्थ अन्य मत मान्नेका हातमा परेको अथवा छपाइएको भए सो ग्रन्थलाई नै अप्रमाण मान्ने पनि केही जैनीहरूको स्वभाव छ । यो उनीहरूको मिथ्या कुरो हो । किनभने कोही मान्ने र कोही न मान्ने हुँदा कुनै ग्रन्थ जैनमत बाहिर हुन सक्दैन । कुनै ग्रन्थलाई कोही पनि नमान्ने र कहिल्यै कुनै जैनीले नमान्ने भए त्यो अग्राह्य हुन सक्छ । तर त्यस्तो कुनै ग्रन्थ छैन जसलाई कुनै पनि जैनी न मान्दो हो । जुन व्यक्ति जुन ग्रन्थलाई मान्दछ, त्यस ग्रन्थ विषयक खण्डन मण्डन पनि त्यसैको लागि मानिन्छ । तर धेरै यस्ता पनि छन् जो त्यस ग्रन्थलाई जान्ने मान्ने भएर पनि सभा वा संवादमा आफू बदलिन्छन् । यसैकारण जैनीहरू आफ्ना ग्रन्थलाई लुकाई राख्दछन् । भिन्नमतका मानिसलाई न दिन्छन्, न सुनाउँछन् र छुट्टाउँछन् । किनभने जैनीहरूका ग्रन्थमा भरिएका असम्भव कुराहरूवारे ठीक उत्तर तिनीहरू कसैले पनि दिन सक्दैनन् । यसको सही उत्तर झुठो कुरालाई छोडिदिनु हो । तेह्रौं समुल्लासमा ईसाईहरूका मतको बारेमा लेखिएको छ । यिनीहरू बायबिललाई आफ्नो धर्मपुस्तक मान्दछन् । यिनीहरूको खास जानकारी उहाँ तेह्रौं समुल्लासमा हेर्नुहोला । र चौधौं समुल्लासमा मुसलमानहरूका मत विषय लेखिएको छ । यिनीहरू कुरानलाई आफ्नो मतको मूलपुस्तक मान्दछन् । यिनीहरूको पनि व्यवहारको विशेष जानकारी चौधौं समुल्लासमा हेर्नुहोला । त्यसपछि वैदिक मत विषयमा लेखिएको छ । जो ग्रन्थकर्ताको तात्पर्य । यी चारै कुरामाथि ध्यान दिएर ग्रन्थ पढ्ने व्यक्तिले मात्र ग्रन्थको वास्तविक मर्मलाई बुझ्दछ ।

आकांक्षा—कुनै विषयमा वक्ता र वाक्यमा प्रयोग भएका

पदहरूको परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध ।

योग्यता—कार्य सम्पादन गर्न सक्ने क्षमता भएका पदहरू । जस्तै पानीले सिच्नु ।

आसत्ति—परस्पर सम्बन्ध पदहरूलाई उपयुक्त ठाउँमा प्रयोग गर्नु ।

तात्पर्य—वक्ता वा लेखकले जसको लागि बोलेको वा लेखेको छ, त्यसैसँग त्यस बोलाई वा लेखाईलाई सम्बन्ध गर्नु ।

धेरैजसो हठी दुराग्रही व्यक्ति वक्ता वा लेखकको अभिप्राय विरुद्ध कल्पना गर्ने गर्दछन् खासगरी मतावलमबी व्यक्तिहरू । किनभने आफ्नो मतप्रतिको ढिपीले तिनीहरूको बुद्धि अन्धकारमा परेर नष्ट भएको हुन्छ । यसैले जसरी म पुराण, जैनीहरूका ग्रन्थ, बायबिल र कुरानलाई पहिले नै नराप्नो देखिले नहेरी तिनमा रहेका गुणहरू ग्रहण र दोषहरू त्याग तथा अन्य मनुष्यजातिको उन्नतिका लागि प्रयत्न गर्दछु, त्यस्तै सबैले गर्नु उचित छ ।

यो मतहरूका अलि-अलि मात्र दोष देखाइका छन् जसलाई देखेर मनुष्यहरू सत्य र असत्यमत निर्णय गर्नु सक्नु र सत्य ग्रहण तथा असत्य त्याग गर्न, गराउन समर्थ होऊन् । किनभने एउटै मनुष्यजातिमा झुक्याएर, भड्काएर, एक अर्काको शत्रु बनाएर, लडाईं भीडाईं मार्नु विद्वान्हरूको स्वभाव विरुद्ध हो । यद्यपि यस ग्रन्थलाई देखेर अविद्वान्हरू उल्टो विचार गर्ने छन्, तर बुद्धिमान् व्यक्ति यसको अभिप्राय उचितरूपमा बुझ्ने छन् । यसैले म आफ्नो प्रयत्न सफल सम्झन्छु र आफ्नो अभिप्राय सबै सज्जनहरूसामु राख्दछु । यसलाई पढेर र पढ्न लगाएर मेरो श्रमलाई सफल पार्नुहोला । यसै प्रकार पक्षपात नगरी सत्य अर्थ प्रकाश गर्नु मेरो वा सबै महानुभावहरूको मुख्य कर्तव्य कर्म हो ।

सर्वात्मा सर्वान्तर्यामी सच्चिदानन्द परमात्मा आफ्नो कृपाले यस आशयलाई विस्तृत र चिरस्थायी गरून् ।

अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वरशिरोमणिषु ।

॥ इति भूमिका ॥

स्थान महाराणाजीका उदयपुर,

भाद्रपद शुक्लपक्ष संवत् १९३९

(स्वामी) दयानन्द सरस्वती

दयानन्दसरस्वती

ओ३म्

अथसत्यार्थप्रकाशः

श्रीयुक्तदयानन्दसरस्वतीस्वामिविरचितः

दयाया आनन्दो विलसति परस्स्वात्मविदितः,
सरस्वत्यस्यान्ते निवसति मुदा सत्यशरणा।
तदाख्यातिर्यस्य प्रकटितगुणा राष्ट्रि परमा,
सको दान्तः शान्तो विदितविदितो वेद्यविदितः ॥ १ ॥

सत्यार्थप्रकाशाय ग्रन्थस्तेनैव निर्मितः।

वेदादिसत्यशास्त्राणां प्रमाणैर्गुणसंयुतः ॥ २ ॥

विशेषभागीह वृणोति यो हितं,
प्रियोऽत्र विद्यां सुकरोति तात्त्विकीम्।
अशेषदुःखात्तु विमुच्य विद्यया,
स मोक्षमाप्नोति न कामकामुकः ॥ ३ ॥

न ततः फलमस्ति हितं विदुषो,
ह्यधिकं परमं सुलभन्तु पदम्।
लभते सुयतो भवतीह सुखी,
कपटी सुसुखी भविता न सदा ॥ ४ ॥

धर्मात्मा विजयी स शास्त्रशरणो विज्ञानविदो वरो-
ऽधर्मेणैव हतो विकारसहितोऽधर्मस्सुदुःखप्रदः।

येनाऽसौ विधिवाक्यमानमननात् पाखण्डखण्डः कृत-
स्सत्यं यो विदधाति शास्त्रविहितन्धन्योऽस्तु तादृग्घ सः ॥ ५ ॥^१

१. ये श्लोक सत्यार्थप्रकाश प्रथम संस्करण की मूलप्रति में विषयसूची के पश्चात् लिखे हुये हैं। महर्षि दयानन्द के ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों में भी इसी प्रकार श्लोक लिखने की शैली मिलती है। ये श्लोक प्रथम और द्वितीय संस्करण में प्रकाशित होने से रह गये थे, इसीलिये यहां प्रकाशित किये जा रहे हैं।

—सम्पादक